विश्लेषण

गांधी का कर्म बोध

किशोर संत

गांधीजी का जीवन मानव आत्मा की स्वचेतना और संपूर्णता की ओर एक पुरातन और अखंड यात्रा की कड़ी के रूप में देखा जा सकता है। कमोबेश और विविध रूप में सारी मानव चेष्टाएं जीवन की गुणवत्ता और सार्थकता को बढ़ाने में लगी रहती हैं। परन्तु कभी–कभार एक व्यक्ति का जीवन अपने में एक युग विशेष में, एक संपूर्ण लोक की उभरती चेतना और ऊर्जा का समावेश करता है। एक नए पुरुषार्थ का स्रोत बनकर न केवल इतिहास की दिशा बदलता है वरन् वह मानव चेष्टा का स्तर भी उठा देता है। और भावी पीढ़ियों के लिए नए प्रयोगों की संभावनाएं खोल देता है।

इस युगपुरुष का युगकर्म उसकी अपनी संस्कृति से अवश्य प्रभावित होता है। साथ ही यह प्रयास मानव आत्मा की विभिन्न अभिव्यक्तियों में से एक ही हो सकता है और इस आधार पर इसकी नियति नहीं है कि यह तत्काल अथवा आगे चल के सर्वमान्य हो। समय–समय पर अपने अस्तित्व की स्पष्ट या धुंधलाई झलकें पाने के बावजूद मानव जाति अपनी अंतिम नियति को नहीं जान सकती। आज प्रमाण की कमी नहीं है कि मानव जाति एक ऐसे स्वरचित मार्ग पर चल रही है जिसका परिणाम सर्वनाश हो सकता है। इसके बावजूद कुछ आशाजनक संकेत नज़र आते हैं कि इस भंवर के बीच में भी मानव जाति की कश्ती डूबने से बच जाएगी। इनमें एक संकेत है अहिंसक साधनों और मानव कार्यकलापों में हिंसा के स्रोतों की खोज। यही गांधीजी की प्रासंगिकता है और आज इसका महत्त्व उस समय से भी अधिक है, जब गांधीजी ने अपनी आस्था को जिया और इसके आधार पर विविध भौतिक तथा आध्यात्मिक कर्म किए।

वर्तमान युग का सबसे अधिक प्रभावशाली तत्त्व इसकी औद्योगिक–यांत्रिक व्यवस्था है जो एक संभ्रांत वर्ग की भोगवादी समृद्धि और सुरक्षा के लिए कार्यरत है। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय अर्थ और राजतंत्र की तैयारी की व्यवस्था का रूप लेते हैं, जो एक ओर प्राकृतिक संसाधनों का नाश करती है और दूसरी ओर सामाजिक सम्बन्धों का विघटन करती है।

हमारे समाने महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि गांधी कर्म का आधुनिक युग के साथ क्या संबंध है? इसका उत्तर खोजने से पहले, हमें इस युग की विशेषता को समझना होगा। वर्तमान युग का सबसे अधिक प्रभावशाली तत्त्व इसकी औद्योगिक–यांत्रिक व्यवस्था है जो एक संभ्रांत वर्ग की भोगवादी समृद्धि और सुरक्षा के लिए कार्यरत है। इसके अंतर्गत राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय अर्थ और राजतंत्र की तैयारी की व्यवस्था का रूप लेते हैं, जो एक ओर प्राकृतिक संसाधनों का नाश करती है और दूसरी ओर सामाजिक सम्बन्धों का विघटन करती है। गांधीजी

ने अपने विलायत और दक्षिण अफ़्रीका के अनुभव के आधार पर, इस सभ्यता द्वारा मानवता के लिए पैदा किए गए ख़तरों को समझा, उन्होंने 'हिंद स्वराज' में इसे शैतानी सभ्यता का नाम दिया, इसकी लालसा प्रवृत्ति का खंडन किया और इसके आंतरिक गुण–दोष को समझकर इसे नकारने का संकल्प किया।

इस समझ और संकल्प के साथ गांधीजी ने भारतीय संस्कृति एवं आध्यात्मिक धरातल का पुनः समर्थन किया और अपना सारा जीवन, आधुनिकता से आगे नए मानव जीवन के लिए सिद्धांत और कर्म की खोज में, आविष्कार और संघर्ष में लगाया।

यह कैसे घटित होता है? यह कैसे संभव है कि एक अकेला व्यक्ति सारे युग को, एक सभ्यता को चुनौती दे? इन प्रश्नों के उत्तर के लिए व्यक्ति, समाज और वास्तविकता की भौतिक अवधारणाओं से आगे देखना पड़ता है। इसमें इस तथ्य को पहचानना ज़रूरी है कि मानव व्यक्तित्व अपने आपको इस रूप में देखता है, अपनी भौतिक प्रवृत्तियों को नियंत्रित करता है और अपनी आत्मा स्वरूप है, जिसमें परमात्मा का अंश है। इस दृष्टि से काल विशेष में, जब कोई व्यक्ति अपने आपको इन बंधनों से मुक्त कर, मानवता और सृष्टि के लिए बेहतर मूल्यों का सृजन करता है, तो वह अपने जीवन को एक बहुत ऊंची ज़िम्मेदारी के स्तर पर ले जाता है। यहां से वह अपने युग की प्रचलित सांसारिक समझ और मूल्यों को चुनौती देता है।

यूनानी मिथकों में एक चरित्र है, जिसका नाम है सिसीफस, इसे शाप है कि उसे अपने आगे एक भारी चट्टान धकेलते हुए पहाड़ के शिखिर पर पहुंचना है। यह चरित्र और चित्र आधुनिक मनुष्य की दशा को दर्शाते हैं, जिसके अंतर्गत मानव के पास इसके अलावा कोई चारा नहीं कि वह अपने द्वारा रचित इस औद्योगिक सभ्यता के भार को ढोए, इसे जिए और इससे आगे निकले।

गांधी कर्म का स्रोत–बिंदु यह आत्मबोध है। यहां एक साथ कई द्वैत पक्षों का समावेश है। तत्कालिक और अनंत, स्व एवं विश्व, भौतिक तथा आध्यात्मिक, वास्तविक और संभावित। यह गांधी दृष्टि केवल वास्तविकता का स्थिर प्रतिबिंब मात्र नहीं है। इसमें समझ के साथ–साथ प्रकाश प्रदान करने की शक्ति है। परन्तु यह दोनों भी वास्तविकता को बदलने के लिए पर्याप्त नहीं हो सकते। बदलाव के लिए आवश्यक है एक दायित्वपूर्ण संबंध, प्रतिज्ञा, जो पलायन और ग़ैर ज़िम्मेदारी के विपरीत है। गांधीजी का जीवन, वर्तमान युग एवं सभ्यता के साथ जूझने की महान् प्रतिबद्धता दर्शाता है। इस संदर्भ में अंग्रेज़ी के साहित्यकार विद्याशंकर नैपाल ने यह टिप्पणी की है कि गांधीजी ने अपने इंग्लैंड प्रवास के दौरान योरोप की औद्योगिक वास्तविकता में कोई रुचि नहीं दिखाई। ऐसे प्रतीत होता है कि गांधीजी ने जान रस्किन और लियो टॉल्सटॉय से प्रभावित होकर आधुनिक औद्योगिकी के चरित्र को स्वीकारने के बजाय इसे पूर्णतः नकार दिया। यूनानी मिथकों में एक चरित्र है, जिसका नाम है सिसीफस, इसे शाप है कि उसे अपने आगे एक भारी चट्टान धकेलते हुए पहाड़ के शिखिर पर पहुंचना है। यह चरित्र और चित्र आधुनिक मनुष्य की दशा को दर्शाते हैं, जिसके अंतर्गत मानव के पास इसके अलावा कोई चारा नहीं कि वह अपने द्वारा रचित इस औद्योगिक सभ्यता के भार को ढोए, इसे जिए और इससे आगे निकले। गांधीजी ने मानव आत्मा को इस बोझ से मुक्त रखने का रास्ता सुझाया।

20वीं शताब्दी के उतरार्द्ध में औद्योगीकरण के विस्तार और गति में बढ़ोतरी हुई है, जिसके फलस्वरूप सामाजिक ताने–बाने, मानव संवेदनशीलता और प्राकृतिक संसाधनों की अपूर्व क्षति हुई है। गांधीजी का मानना था कि मानवता और प्रकृति इस भार को सहन नहीं कर पाएगी। इसलिए इस यांत्रिक औद्योगीकरण की गति को कम करना होगा और इसे मानवता के मापदंडों के अनुसार मर्यादित करना होगा। यही कसौटी समाज की व्यवस्थाओं के लिए लागू करनी होगी। गांधीजी द्वारा इस युग की यांत्रिक और व्यवस्थागत वास्तविकताओं को नकारने का परिणाम यह है कि उनके अनुयायियों के समक्ष ये यक्ष प्रश्न आज भी खड़े हुए हैं। गांधी के बाद भारत के विकास और राजकाज में ये अनुयायी अपनी नीति और भूमिका दोनों ही स्पष्ट नहीं कर पाए।

गांधी कर्म की यही विशेषता है कि यह धर्मपरायण है, जिसमें आध्यात्मिकता और व्यावहारिकता का समावेश है। स्वतंत्रता की ओर कार्यरत होकर भी इसमें सत्य और अहिंसा का कठोर अनुशासन है। इस द्वारा प्रवाहित अपार जनशक्ति एक ओर यथास्थिति को बदलने में लगती है, तो दूसरी ओर यह नई समाज व्यवस्था की रचना के सटीक प्रयोग करती है।

क्या इसका यह अर्थ है कि मानव प्रगति में गांधीजी और गांधीजन एक अजूबे की तरह ही देखे जाएंगे। गांधीजनों की निराशा और बिखराव से कुछ ऐसा लगता है, परन्तु यह ध्यान में रखने योग्य है कि गांधीजी द्वारा प्रायोजित मूल्यों और सिद्धांतों का क्रियान्वयन संस्थागत स्वरूप पर निर्भर नहीं रहता। आध्यात्मिक दृष्टि से इसे आत्मा की अपनी स्वतंत्रता और संपूर्णता की प्राप्ति के लिए प्रयास के रूप में देखा जा सकता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह भारतवासियों की अपनी नैतिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों के आधार पर जागृति और स्वतंत्रता के लिए आंदोलन का रूप है। गांधी कर्म की यही विशेषता है कि यह धर्मपरायण है, जिसमें आध्यात्मिकता और व्यावहारिकता का समावेश है। स्वतंत्रता की ओर कार्यरत होकर भी इसमें सत्य और अहिंसा का कठोर अनुशासन है। इसके द्वारा प्रवाहित अपार जनशक्ति एक ओर यथास्थिति को बदलने में लगती है, तो दूसरी ओर यह नई समाज व्यवस्था की रचना के सटीक प्रयोग करती है।

यहां यह प्रश्न उठ सकता है कि क्या इस प्रकार का आध्यात्मिक, अनुशासित और नैतिक प्रयोग जनसाधारण आम लोगों द्वारा सामूहिक रूप से किया जा सकता है? इसका एक उत्तर तो भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास से मिलता है। 50 से 60 के दशकों में संयुक्त राज्य अमेरिका में अफ़्रीकी मूल के लोगों द्वारा किया गया नागरिक अधिकार प्राप्ति का आंदोलन भी इसका स्पष्ट उदाहरण है। परन्तु इसके मर्म को समझने के लिए जनसाधारण के चरित्र और उसकी संस्कृति को देखना होगा।

संभ्रांत और अधिनायकवादी दृष्टि से आम लोग के बारे में, यह अवधारणा है कि वह अंधविश्वास और आदत से ग्रस्त, समान प्रवृत्ति वाला जनसमूह है, जिसे कमोबेश ज़ोर–ज़बर्दस्ती से ही व्यवस्थित किया जा सकता है। इसके विपरीत दूसरी मान्यता है कि हर मनुष्य में दैविक अंश है।

'आदम को ख़ुदा मत कहो, आदम ख़ुदा नहीं
लेकिन ख़ुदा के नूर से आदम जुदा नहीं'

हजारों वर्षों की व्यक्तिगत, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति के अंतर्गत मनुष्य की आत्मा मानव संबंधों, कलाकृतियों, दर्शन और नैतिकता में

विभिन्न स्वरूपों में प्रकट हुई है। समुदायों के रूप में मनुष्य स्वभाव तथा आवश्यकता दोनों के आधार पर नैतिकता का धनी है। परंतु मनुष्य में सृजन और आविष्कार करने की भी शक्ति है और इसके आधार पर प्रतिभाशाली और सत्ता सम्पन्न होने की प्रवृत्ति है। इस प्रयास में मनुष्य समुदाय से अलग होकर दूसरों पर नियंत्रण कर, अपने आप में सत्ता का केन्द्र बन जाता है। जब यह स्वनिर्मित सत्ता नैतिकता या धर्मविहीन रूप लेती है, तो एक ऐसा संभ्रांत वर्ग उभरता है, जो शैतानी या मानवता–विरोधी प्रवृत्ति का होता है। यह अधर्मी सत्ता एक छोटे समुदाय में, राष्ट्र में, समाज में या पूरे विश्व तक फैल सकती है। यह आज की स्थिति है। जैसे–जैसे इसका विस्तार बढ़ता है, इस सत्ता को बनाए रखने के लिए संस्थागत व्यवस्थाएं स्थापित होती हैं। अपने आकार और पैठ को बढ़ाने के लिए मानव को अपनी गिरफ़्त में रखने वाली व्यवस्थाएं अपने आपको धार्मिक और नैसर्गिक दर्शाने लगती हैं। अपनी सत्ता को व्यवस्थित और स्वीकार्य कराने के साथ–साथ शासक साम, दाम, दंड, भेद के अस्त्रों को काम में लेता है।

भारत में जनसाधारण के चरित्र के बारे में एक अन्य दृष्टि हमें बंगाली लेखक ताराशंकर बंद्योपाध्याय से मिलती है। उन्होंने अपने उपन्यास 'गणदेवता' की भूमिका में भारत के ग्रामीण जीवन के बारे में लिखा है; ''भारत के ग्रामीण जीवन की परम्पराएं सामान्यतया अन्य औद्योगीकरण पूर्व कृषि आधारित समाजों की तरह ही हैं, परन्तु पंजाब, सिंध, गुजरात, मराठा, दाव्रिड़, उत्कल, बंग के इस विशाल विस्तार के समाज में एक और व्यापक तत्त्व रहा है, जिसे अनुशासन कह सकते हैं। यह अनुशासन नीति पर आधारित है, जिसका अर्थ है कि इसमें न्याय–अन्याय का बोध कर सकते हैं। यह अनुशासन नीति पर आधारित है, जिसका अर्थ है कि इसमें न्याय–अन्याय का बोध है। यह बोध प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में जीवन के हर पहलू का अभिन्न अंग है। पूरी सामाजिक परंपरा इस बोध पर आधारित रही है। इसी बोध के कारण प्राकृतिक विविधता के बावजूद भारत के ग्राम–जीवन में तकनीकी और व्यावहारिक दृष्टि से एक आश्चर्यजनक समानता है।

गांधी कर्म जनसाधारण के इस अनुशासन एवं बोध पर आधारित था। हमारे सामने प्रश्न यह है कि क्या यह धर्म और नीति बोध, लालसा से प्रेरित हिंसक औद्योगिकी–सभ्यता के आक्रमण के सामने टिक पाएगा। क्या मानवता की नैतिक और आध्यात्मिक शक्ति इस विनाशक प्रवाह को रोक पाएगी, या वह स्वयं इसका शिकार हो जाएगी? आज के हालात में कई ऐसे संकेत हैं, जिनसे यह लगता है कि आज की व्यवस्थाएं इन विनाशक शक्तियों को नहीं रोक पा रही हैं। हिंसक प्रवृत्तियों में बढ़ोतरी, हिंसा के बल पर विश्व पर आधिपत्य,

असीम उपभोग हेतु असीम उत्पादन और इसके द्वारा संसाधनों की क्षति, विश्वव्यापी तापमान में वृद्धि जैसे पर्यावरणीय संकट इसके कुछ उदाहरण हैं, परंतु इस घोर अंधकार में कुछ आशा और विश्वास के बिन्दू भी हैं। इनमें मौलिक तथ्य यह है कि मानवता के आंतरिक गुण समाप्त नहीं किए जा सकते। मानव का धर्म और नीति बोध, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक व्यवहार में नष्ट होकर भी, मानव की संवेदना, विचार और संबंधों में टिका रहता है। जब मानव को इस घोर धर्म संकट का अहसास होता है, तो मानव चेतना और चेष्टा पुनः अपनी नैतिक शक्ति का सहारा लेकर अपनी सच्चाई की ओर बढ़ती है। आज भी इस संवेदना के आधार पर विश्व शांति, पर्यावरण सुरक्षा, सामाजिक न्याय और अपने संसाधनों पर अधिकार के संघर्ष एवं आंदोलन सक्रिय हैं। इन सबके साथ गांधीजी के विचारों और प्रयोगों को समझने के लिए विश्व भर में रुचि पैदा हुई है। गांधी विचार और कर्म की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक विशेषताओं और संस्थागत रूढ़ियों एवं कर्मकांड से परे, नए गांधी मार्ग के खोज की प्रबल सम्भावनाएं बनी हैं, जिन्हें स्वतंत्र साधकों द्वारा प्रशस्त किया जा सकता है।

जब मानव को इस घोर धर्म संकट का अहसास होता है, तो मानव चेतना और चेष्टा पुनः अपनी नैतिक शक्ति का सहारा लेकर अपनी सच्चाई की ओर बढ़ती है। आज भी इस संवेदना के आधार पर विश्व शांति, पर्यावरण सुरक्षा, सामाजिक न्याय और अपने संसाधनों पर अधिकार के संघर्ष एवं आंदोलन सक्रिय हैं। इन सबके साथ गांधीजी के विचारों और प्रयोगों को समझने के लिए विश्व भर में रुचि पैदा हुई है।

अंत में कुछ शब्द बुद्धिजीवियों के लिए। उन्हें अपने स्वधर्म के हेतु समसामयिक गांधी विचार की शक्ति को समझना होगा। विचार और वाणी के वाहक और पात्र के रूप में वह आत्मा की प्रेरणा के बहुत निकट है। मानवता के इस संकटकाल में उनका दायित्व है कि वे स्पष्टदृष्टा बनें और सत्य को निडर होकर मानवता के समक्ष रखें। यह कर्म अकादमी के बंद कमरों और गलियारों में नहीं किया जा सकता। सुकरात की तरह उन्हें चौराहों और चौपालों में विचरना होगा, जहां लोग ऐसे प्रश्न खड़े कर रहे हैं, जिनके विशालकाय उत्तर हैं।

मैं इस लेख को सुकरात की कुछ पंक्तियों से समाप्त करना चाहूंगा, जो यह दर्शाती हैं कि बुद्धि एवं आत्मा से प्रेरित मनुष्य कैसे प्रचलित मान्यताओं को चुनौती देता है। इन वाक्यों से यह भी सामने आता है कि वह पुरातन मनीषी और हमारे युग का महात्मा, दोनों अपने युगकर्म में समान प्ररेणा के धनी थे।

''और मैं विश्व में विचरता हूं, एक ही ध्येय लेकर, यह जानने के लिए कि कौन सा नागरिक या प्रदेशी गुणी और समझदार है। अगर वह ऐसा नहीं है, तो मैं उसे दर्शाता हूं कि वह ऐसा नहीं है, मैं इस कर्म में इतना मगन रहता हूं कि मेरे पास दुनियादारी के लिए या मेरे स्वार्थ के लिए कोई अवकाश नहीं। भगवान से प्रेरित इस सेवा कार्य में लगे रहने के सिवाय मेरे पास कोई चारा नहीं।''

''फिर मैं एक से दूसरे व्यक्ति के पास गया, मुझे लगा कि वह मुझे शत्रु मानता है और इससे मुझे पीड़ा हुई और डर भी लगा, परन्तु मेरे लिए मेरे कर्म की अनिवार्यता थी, मेरा मानना था कि दिव्य वाणी को सबसे पहले रखना ही होगा।''

ग्रामीण उत्थान के लिए प्रतिबद्ध, सेवा मंदिर व आस्था जैसी स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ जुड़ाव रहा है। गांधी विचार व दर्शन में रुचि।